International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
Sep-Oct - 2017, Volume-4, Issue-5
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org Email- editor@ijesrr.org

कालिदास: काव्य: श्रृंगारिक अध्ययन

डॉ गोविंद राम चरोरा,

संस्कृत विभाग, महारानी श्री जया महाविद्यालय

भरतपुर, राज.

सार:

निम्नलिखित कारणों से कालिदास को प्रथम शताब्दी ई. पू. में मानना उचित है। कालिदास की भाषा और शैली गुप्तकालीन शिलालेखों से बहुत प्राचीन है। शिलालेखों में कृत्रिमता, लम्बे समासों का होना, पाणिनीय व्याकरण का पूर्ण प्रभाव इस बात को सिद्ध करता है कि उनमें और कालिदास में कई शताब्दियों का अन्तर है। समुद्रगुप्त की प्रयागवाली प्रशस्ति इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। एक ही समस्त पद लगभग 30 पंक्तियों का है और उस एक वाक्य में ही उसके सारे दिग्विजय का वर्णन है। ऐसी कृत्रिमता कालिदास में सर्वथा यही है और न ऐसे समासयुक्त पद । कालिदास की भाषा और शैली रामायण और महाभारत की भाषा और शैली के बहुत समीप है। कालिदास ने कितने ही अपाणिनीय प्रयोग किए हैं। इससे ज्ञात होता है कि कालिदास उस समय हुआ था, जब पाणिनीय व्याकरण पूर्णतया प्रतिष्ठित नहीं हुआ था या अन्य संस्कृत व्याकरण भी पाणिनीय व्याकरण के साथ ही साथ प्रचलित थे। उनके आधार पर ही कालिदास ने ऐसे प्रयोग किए। गुप्तकाल में पाणिनीय व्याकरण पूर्णतया प्रतिष्ठित हो चुका था। कोई भी कवि उसके नहीं कर सकता था।

मुख्यशब्द: काव्य जगत, ऋतुसंहारम्, मेघदूतम्द

परिचय

काव्य जगत में कालिदास की असाधारण प्रसिद्धि के कारण बाद में उनका नाम एक उपाणि के रूप में हो गया। जिस प्रकार आजकल शंकराचार्य नाम उपाधि के रूप में है और चारों मठों के अध्यक्ष शंकराचार्य कहे जाते हैं। उसी प्रकार बाद में जो सुयोग्य राजकवि हुए। उन्हें राजा के द्वारा कालिदास की उपाधि प्राप्त हुई या उन्होंने अपना उपनाम ही कालिदास रख लिया। परिणामस्वरूप अनेक कालिदास हो गये, और उनकी रचनायें भी कालिदासकृत कही जाने लगीं। राजशेखर का ऐसे तीन कालिदासों का ज्ञान था । अतएव उसने कहा है–

एकोऽपि जीयते हन्त कालिदासो न केनचित् ।

श्रंगारे ललितोद्गारे कालिदासत्रयी किमु । ।

कालिदास के नाम से 41 रचनायें प्रचलित हैं। परन्तु इनमें से निम्नलिखित रचनायें ही वास्तविक रचनायें मानी जाती हैं। नाट्यशास्त्र – अभिज्ञान – शाकुन्तलम्, विक्रमोर्वशीयम्द, मालविकाग्नि नित्रम् । काव्यग्रन्थ रघुवंश महाकाव्यम्दकुमारसम्भवम् । गीति काव्य – मेघदूतम्द, ऋतुसंहारम्द । प्रथम 6 ग्रन्थों को सभी विद्वान् कालिदास की कृति मानते हैं। सातवें ग्रन्थ ऋतुसंहारम्द के विषय में विद्वानों में विवाद है। कुछ इनकों कालिदास की कृति मानते हैं कुछ नहीं । मेरे विचार से ऋतुसंहार को कालिदास की कृति मानना उचित है। यह उनकी अप्रौढ़ावस्था की कृति होगी। अतः इसमें उतनी प्रौढ़ता और भावों का उत्कर्ष नहीं है। इन सात के अतिरिक्त कालिदास के नाम से प्रचलित अन्य कृतियों अन्य विद्वानों की समझनी चाहिये ।

महाकवि कालिदास का काल-

चूंकि कालिदास जी ने अपने रचनाग्रन्थों में अपने विषय में किसी भी बात का उल्लेख नहीं किया है, अतः उनके समय का निर्णय भी विद्वानों के लिए विवाद का विषय बना हुआ है। अतिपुष्ट और असंदिग्ध प्रमाणों के अभाव के कारण कालिदास के समय के विषय में जो मत प्रस्तुत किये गये हैं, वे पूर्णरूप से निर्णायक नही है। प्रस्तुत किये गये मत अधिकांशतः अनुमान, कल्पना और जनश्रुतियों पर आश्रित है। अतः नीचे विभिन्न मतों पर विचार करके जो मन्तव्य पक्ष बताया गया है, उससे यह भी समझना चाहिये कि यह मत अधिक युक्ति संगत और प्रामाणिक प्रतीत होता है।

कालिदास के समय के विषय में जो मत प्रस्तुत किये गये हैं उनमें से दो मत मुख्य रूप से प्रचलित हैं- प्रथम शताब्दी ई.पू. का मत चतुर्थ शताब्दी ई. या गुप्तकालीन मत । प्रथम मत के अनुसार कालिदास विक्रम संवत के प्रवर्तक उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य के नवरत्नों में से एक थे। द्वितीय मत के अनुसार कालिदास विक्रमादित्य उपाधिकारीह चन्द्रगुप्त द्वितीय (375 -413 ई.) के आश्रित कवि थे। प्रथम मत को अधिकांश भारतीय विद्वान् मानते हैं और द्वितीय मत को अधिकांश विदेशीय विद्वान् मानते हैं। इन दोनों मतों पर विचार करने से पूर्व कालिदास की पूर्व सीमा और अपरसीमा को समझ लेना आवश्यक है।

कालिदास ने माविकाग्निमित्र में शुंगवंशी राजा अग्निमित्र को नाटक का नायक बनाया गया है वह मौर्यवंश का उच्छेद करके साम्राज्य को छीन लेने वाले सेनापति पुण्यमित्र का पुत्र था। उसका समय लगभग 150 ई. पू. माना जाता है। अतः कालिदास का समय 150 ई. पू. से पूर्व नहीं माना जा सकता है। कालिदास की अपरसीमा का निर्धारण वाणकृत हर्षचरित की भूमिका में प्राप्त उसकी प्रशस्ति से होता है। बाण ने भूमिका के श्लोक 16 में लिखा है-

निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिष्क ।

प्रीतिर्मपुर सान्द्रासु मंजरीविव जायते ।।

बाण सम्राट हर्ष (606-647 ई.) का आश्रित कवि था बाण के द्वारा कालिदास का उल्लेख होने से वह 606 ई. से पूर्व होना चाहिये। पुलकेशी द्वितीय के आश्रित कवि रविकीर्ति के दक्षिण भारत के एहोल' नामक ग्राम में प्राप्त शिलालेख में कालिदास का उल्लेख है इसमें रविकीर्ति अपने आपको कालिदास और भारवि जैसा महाकवि बताता है।

येनायोजि नवेऽपूमस्थिर मर्थविधी विवेकिना जिनवेश्य ।

स विजयतां रविकर्ति कविताश्रित कालिदास भारवि कीर्तिः ।।

यह भी कालिदास की अपरसीमा छठी शताब्दी से पूर्व सिद्ध करता है। मन्दसोर के शिलालेख पर ध्यान देने से कालिदास की अपरसीमा 473 ई. से पूर्व सिद्ध होती है। यह शिलालेख कवि वत्समटि कृत है। जुलाहों के संघ ने दशपुर (वर्तमान दसोर या मन्दसोर) में स्थित सूर्यमन्दिर का जीर्णोद्धार किया था। उसी की प्रशस्ति में यह शिलालेख है यह शिलालेख 433 ई. का है। इसके निम्नलिखित पद्यों में मेघदूत और ऋतुसंहार की छाया दृष्टिगोचर होती है-

चलत्पताकान्यबलासनाथान्यत्यर्थ शुक्लान्यधिकोन्नतानि ।

तडिल्लताचित्रसिताम्रकूट तुल्यो पमानानि ग्रहाणि यत्र ।।

उद्देश्य

1. काव्य जगत में कालिदास की असाधारण प्रसिद्धि के कारण है
2. कालिदास कृत काव्यों में ऋतुसंहार निम्न श्रेणी का ग्रन्थ माना जाता है

कालिदास को प्रथम शताब्दी ई. पू. में मानने के कारण :-

निम्नलिखित कारणों से कालिदास को प्रथम शताब्दी ई. पू. में मानना उचित है।कालिदास की भाषा और शैली गुप्तकालीन शिलालेखों से बहुत प्राचीन है। शिलालेखों में कृत्रिमता, लम्बे समासों का होना, पाणिनीय व्याकरण का पूर्ण प्रभाव इस बात को सिद्ध करता है कि उनमें और कालिदास में कई शताब्दियों का अन्तर है। समुद्रगुप्त की प्रयागवाली प्रशस्ति इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। एक ही समस्त पद लगभग 30 पंक्तियों का है और उस एक वाक्य में ही उसके सारे दिग्विजय का वर्णन है। ऐसी कृत्रिमता कालिदास में सर्वथा यही है और न ऐसे समासयुक्त पद । कालिदास की भाषा और शैली रामायण और महाभारत की भाषा और शैली के बहुत समीप है। कालिदास ने कितने ही अपाणिनीय प्रयोग किए हैं। इससे ज्ञात होता है कि कालिदास उस समय हुआ था, जब पाणिनीय व्याकरण पूर्णतया प्रतिष्ठित नहीं हुआ था या अन्य संस्कृत व्याकरण भी पाणिनीय व्याकरण के साथ ही साथ प्रचलित थे। उनके आधार पर ही कालिदास ने ऐसे प्रयोग किए। गुप्तकाल में पाणिनीय व्याकरण पूर्णतया प्रतिष्ठित हो चुका था। कोई भी कवि उसके नहीं कर सकता था। शाकुन्तल के अपाणिनीय प्रयोगों का शैली शीर्षक में है। कुछ ऐसे प्रयोग है- पातयामास को पृथक् करके प्रयोग तं पातयां प्रथममास पपात पश्चात् प्रभ्रंशयांचकार को पृथक करना- प्रभ्रशयां यो बहुषं चकार ।) बभूव के स्थान पर वैदिक रूप 'आस' का प्रयोग कामयमान के स्थान पर कामयान प्रयोग दन्तवार के स्थान पर वैदिक दाश्वार का प्रयोग नियमों का उल्लंघन संग्रह 'कालिदास कीके स्थान पर वैदिक रूप त्रियम्बक का प्रयोग उन्होंने अप्रचलित एवं वैदिक शब्दों का प्रयोग किया है. जैसे पेलन, परमेष्ठी, पिण्ण्य, आदि शब्द। यही नहीं उन्होंने शाकुन्तल में अभी वेदि परित० यह वैदिक छन्द प्रस्तुत किया है।

इससे ज्ञात होता है कि वह वैदिक काल के बहुत समीप थे रामायण और महाभारत के कितने ही आर्य प्रयोग और अप्रचलित प्रयोग उसकी रचनाओं में मिलते हैं। उनकी शैली से ज्ञात होता है कि उनके समय में संस्कृत बोलचाल की भाषा थी। पतंजलि के समय में संस्कृत बोलचाल की भाषा थी. यह महाभाष्य के सूत और वैयाकरण के शास्त्रार्थ से सिद्ध होता है। कालिदास का समय उसके समीप ही होना चाहिये। मालिवकाग्नि मित्रम् में आग्नि मित्र को नायक बनाना, उसका भरतवाक्य और उस समय के कुछ विशेष उल्लेखनीय तथ्यों पर प्रकाश डालना उनका अग्निमित्र के समय के समीप होना सिद्ध करता है। में उल्लेख है कि उज्जैन के बृद्ध उदयन की कथा सुनायेंगे प्राप्यावन्तीनुदयन कथा को विदग्राम वृद्धान् इससे ज्ञात होता है कि उनके समय तक उज्जैन में उदयन की कथा अतिप्रचलित थी उदयन बुद्ध और महावीर का समकालीन था। उदयन की यह प्रसिद्धि ई.पू. यही सम्भव है। उन्होंने परशुराम को ऋषि माना है अवतार नहीं यह ई.पू. में ही था। ई.पू. के बाद में उन्हें अवतार माना गया है। अश्वघोष पर प्रभाव का उल्लेख किया जा चुका है। यह भी ई.पू. में स्थिति को सिद्ध करता है उन्होंने मेघदूत में विदिशा को एक समृद्ध प्रदेश माना है। अग्निमित्र विदिशा का राजा था। इससे भी ई.पू. सिद्धहोता है। उन्होंने रघुवंश (6-60) में पाण्ड्य देश के राजा का वर्णन किया है-

पाण्ड्योऽयमंसार्पित लम्बहारक्लृप्ताङ्गरागो हरिचन्दनेन ।

आभाति बालातपरक्तसानुसविर्झरोद्गार इवाद्रिराजः ।।

कालिदास के नाटकों में काव्य सौन्दर्य :

कालिदास ने अपनी कृतियों में अन्तः प्रकृति और बाह्य प्रकृति का सुन्दर समन्वय किया है। जो घटना मानव के हृदय में हो रही है, वैसी ही घटना बाह्यप्रकृति में भी हो रही है। राजा दुष्यन्त शकुन्तला से प्रेम करके उसे भूल जाता है उधर प्रस्तावना के श्लोक में भ्रमर शिरीष के पुण्य का स्वाद लेकर उन्हें भुला देते हैं। शाकुन्तल के

चतुर्थीक में यह समय विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है शकुन्तला पति के वियोग में खिन्न है। उधर चन्द्रमा के छिपने से कुमुदनी की अवस्था दयनीय हो गयी है। अन्तर्हिते शशिनि. (43) यदि शकुन्तला प्रिय मिलन के लिए आतुर है तो चकवी भी चकवा से क्षण भर के लिए भी पृथक नहीं रहना चाहती।

प्रकृति प्रेम

कालिदास प्रकृति प्रेमी कवि हैं ऋतुसंहारम्द प्रकृति के उदान्तप्रेम का परिचायक है। पुनश्च कवि द्वारा प्रत्येक रचना में प्रकृति का मनोरम तथा सजीव वर्णन उसका प्रकृति के साथ तादात्म्य का अनुभव कराता है। कालिदास प्रकृति को सजीव और मानवीय भावनाओं से ओतप्रोत मानते हैं मनुष्य के तुल्य वह भी सुख-दुख का अनुभव करती है वह मनुष्य के सुख-दुःख में अपनी सहानुभूति प्रकट करती है। मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे के पूरक हैं शाकुन्तल में शकुन्तला वृक्षों को अपना सहोदर तथा लताओं को अपनी सगी बहन मानती है। अस्ति में सोदरस्नेहो० प्रकृति की नैसर्गिक सुषमा में जो रस और आनन्द है वह कृत्रिम में नहीं है। अतएव वह निसर्ग सुन्दुरी असाधारण मनोरम प्रतीत होती है। शुद्धान्त दुर्लभ० केशरवृक्ष के पास खड़ी हुई शकुन्तला उसकी प्रियालता के तुल्य सुन्दर दीखती हैं। लतासकय एवायं शकुन्तला के लिए आम्र और वनज्योत्स्ना का विवाह पति-पत्नी के विवाह के तुल्य मनोरम है यहां पर शाकुन्तल से ही उदाहरण प्रस्तुत किये हैं अति सुपरिचित काव्य होने से किन्तु ऐसी प्रकृति प्रेम की उद्भावनाएँ मेघदूत, विक्रमोर्वशीय रघुवंश, कुमारसम्भव, मालविकाग्निमित्र आदि में प्रभूत मात्रा में विद्यमान है। उदाहरणार्थ मेघदूत में मेघ के मार्ग का वर्णन रघुवंश सर्ग 13 श्लोक, में संगम का वर्णन मालविकाग्नि इत्यादि ।

सौन्दर्य और प्रेम का चित्रण

कालिदास ने सौन्दर्य और प्रेम के विषय में कुछ अपने मौलिक मन्तव्यों को स्थान दिया है, अतएव उनका सौन्दर्य और प्रेम का वर्णन असाधारण हो गया है। सौन्दर्य बाह्य साधनों की अपेक्षा नहीं करता है सुन्दर वस्तुएं सभी अवस्थाओं में सुन्दर होती है। शाकुन्तल में वल्कल पहनने पर भी शकुन्तला की शोभा कुछ विरख हो रही है सरसिजमनुविद्धं कालिदास के लिए अकृत्रिम सौन्दर्य वास्तविक सौन्दर्य है। इदं किलान्याज मनोहरं वपु शकुन्तला का सौन्दर्य अन्याज मनोहर है। अतएव वह अक्लिष्ट कान्ति है, उसका सौन्दर्य निर्दोष है। उन्होंने स्त्री सौन्दर्य के साथ ही पुरुष सौन्दर्य का भी वर्णन किया है। स्त्री के सौन्दर्य में सुकामलता आदि गुण आवश्यक हैं, तो पुरुष के सौन्दर्य में हृष्टता, पुष्टता, व्यायामशीलता आदि गुण आवश्यक है। अतएव दुष्यन्त का वर्णन किया है कि- अनवरत धनुर्ज्या०- मानव ही नहीं मृगादि के सौन्दर्य का भी उन्होंने वर्णन किया है। ग्रीवा मङ्गाभिरामं स्त्री के सौन्दर्य में लज्जाशीलता अनिवार्य है। अतएव वह (शकुन्तला राजा से स्वयं बात नहीं करत है (वाचं न मिश्रपति०) स्त्री का वास्तविक सौन्दर्य सच्चरित्रता है अतएव कुमारसम्भव में पार्वती ने तपस्या के द्वारा अपने सौन्दर्य को सफल बनाना चाहा। इयेष सा कर्तुमवन्ध्यरूपतां समाधिमास्थाय तपोभिरात्मनः इस प्रकार के सौन्दर्य का फल प्रेम तथा सौभाग्य है

कालिदास ने प्रेम का चित्रण करते हुए यह सिद्ध किया है कि विषय वासना से युक्त प्रेम वास्तविक प्रेम नहीं है। तपस्या से निखरा हुआ प्रेम ही वास्तविक प्रेम है अतएव पार्वती अपने शारीरिक सौन्दर्य से शिव को नहीं जीत सकी, परन्तु तपस्या के बाद उसके आगे शिव आत्म समर्पण करते हैं और अपने आपको उसका दास मानते हैं। अद्य प्रभृत्यववताङ्गि तवास्मि दास क्रीतस्तपोभि० दुष्यन्त और शकुन्तला का प्रेम बाह्य सौन्दर्य पर आश्रित था और विषय वासना प्रधान था, अतः वह प्रेम सफल नहीं हुआ। वियोग के बाद जब दोनों का प्रेम तपस्या की अग्नि में निखरा तब वह सफल हुआ। कालिदास अनियन्त्रित प्रेम को प्रेम नहीं मानता।

अतएव उसने दाम्पत्य प्रेम को महत्व दिया है। दुष्यन्त के शब्दों में उसने अपना मन्तव्य प्रकट किया है कि दाम्पत्य प्रेम ही उचित प्रेम है परस्त्री सम्पर्क हेय है। कुमुदायेव भारतीय मर्यादा के अनुसार उसने आदरणीय उसी व्यक्ति को माना है जो संयमी है विकार है तो सति विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एवधीरा

कालिदास के नाटकों की समान घटनायें :

कालिदास के नाटकों की कतिपय घटनाएं आपस में समानता धारण करती है। शाकुन्तल, विक्रमोर्वशीय तथा मालविकाग्निमित्रम्द की कथा प्रेममूलक है तीनो ही नाटक श्रृंगार रस के है। तीनों नाटक सुखान्त है। विक्रमोर्वशीय और शाकुन्तल की कथा का आधार पौराणिक कथायें है तीनों नाटकों में नायक नायिका पर कुछ उपकार करता है। उसे किसी प्रकार के कष्ट से बचाता है। शकुन्तला को बचाता है, पुरुरवा उर्वशी को दानवों से छुड़ाता हैदुष्यन्त अमर पीड़ितनायक के उपकार के फलस्वरूप नायिका उस पर आकृष्ट होती है नायक-नायिका का प्रथम मिलन होता है। विक्रमोर्वशीय में उर्वसी पहले पुरूरवा पर आकृष्ट होती

है परन्तु शाकुन्तल में पहले दुष्यन्त शकुन्तला पर मोहित होता है प्रथम मिलन के पश्चात् विदाई के समय नायिका कुछ बहाना बनाकर थोड़ी देर रुकती है और नायक के प्रति प्रेम प्रदर्शन करती है। दर्भाकुरेण चरणः सव्याजं विलम्व्य० विक्रमोर्वशीय में उर्वशी का हार लता में फंसता है और वह मुड़कर राजा को देखती है। विक्रमोर्वशीय और शाकुन्तल में द्वितीय अंक में विदूषक का प्रवेश विदूषक को अपने प्रणय का विवरण देना नायक छिपकर नायिका के गुप्त प्रेमालाप को सुनता है और उसकी चेष्टाओं को देखता है। शाकुन्तल में अंक में दुष्यन्त तथा मालविकाग्नि मित्र में अंक नायिका अपने प्रिय को प्रेम पत्र लिखती है। शाकुन्तल में शकुन्तला तथा में उर्वशीनायिका को नायक से किसी बहाने अलग किया गया है- विक्रमोर्वशीय० में देवदूत उर्वशी को स्वर्ग ले जाता है और शाकुन्तल में गौतमी के आने से वियोग हुआ है। प्रणय का फल पुत्रोत्पत्ति है विक्रमोर्वशीय में आयुष तथा शाकुन्तल में भरत । दोनों का पिता की दृष्टि से दूर पालन होता है, आयुष मोर से खेलता है, भरत शेर के शावक से नायक नायिका का मिलन आश्चर्यजनक रूप से होता है।

किसी शाकुन्तल में काव्य सौन्दर्यशाकुन्तल में कवि ने लौकिक और अलौकिक अन्त और बाहय आदर्श औरयथार्थ सभी पक्षों पर जो कवित्व की सुषमा से सम्बन्ध रखते हैं विचार किया है। "कवि की कला की कसौटी है मार्मिक स्थलों व प्रसंगों की पहचान पंडित रामचन्द्र शुक्ल का यह कथन नितान्त प्रामाणिक है। शाकुन्तल मेंभ्रमरकृत राजा व शकुन्तला का मिलन शकुन्तला को विदा और कण्व तथा प्रकृति अभिज्ञान शाकुन्तल के हृदयग्राही स्थल है। शाकुन्तल में बाह्य और अन्तः प्रकृति का अत्यन्त सुन्दर और सामंजस्य युक्त वर्णन है। मानव अन्तः प्रकृति और बाह्य स्थूल प्रकृति में सामान्य समान घटना चक्र वर्णित है यथा-

सौन्दर्य और प्रेम के साधक इस महाकवि ने सौन्दर्य और प्रेम के स्वकीय विचारों को शाकुन्तल में अत्यन्त कौशलपूर्वक प्रकट किया है। सुन्दर वस्तु सभी अवस्था में सुन्दर ही रहती है-

"अहो सर्वास्ववस्थासु रमणीयत्वमाकृतिविशेषाणाम्द"

"किमिव हि मधुराणांमण्डनं नाकृतीनाम्द"

"सरसिजमनुविद्धं शैवलेनापि रम्यम्द

"अनाघ्रातं पुण्यं किसलयमून कररू है।"

प्रेम का स्वरूप तपस्या से निखरता है वासना से नहीं प्रेम तो पूर्व जन्म केसंस्कार जन्य है वह बाह्य रूप पर आधारित नहीं

ऋतुसंहारम्

कालिदास कृत काव्यों में ऋतुसंहार निम्न श्रेणी का ग्रन्थ माना जाता है, कई विद्वानों को सन्देह है कि कदाचित् उक्त काव्य कालिदास का नहीं है परन्तु उनकी यह शंका निर्मूल है। यह अनेक प्रमाणों द्वारा सिद्ध किया जा

सकता है ईसवी के आसपास मन्दसोर की प्रशस्ति में ऋतुसंहार के कुछ श्लोकों की छाया है। इससे यही सिद्ध होता है कि यह काव्य ईसा की 5वीं शताब्दी से पहले का है। कालिदास को ऋतु वर्णन अत्यन्त प्रिय है। उन्होंने अपने काव्यों में किसी न किसी ऋतु का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। कुमारसम्भव में बसन्त का विक्रमोर्वशीय और मेघदूत में वर्षाऋतु का शाकुन्तल में ग्रीष्म का तथा रघुवंश में सभी ऋतुओं का वर्णन कवि ने किया है। सरस्वती देवी की आराधना करते समय प्रकृति के वर्णन को छोड़कर और कौन सा सरस एवं सरल विषय कवि अपने लिए चुनेगा इस तरह के काव्य में किसी कथानक का सम्बन्ध न रहने से तब स्फूर्ति रहती है तब श्लोक बनाकर पीछे से जोड़ सकते हैं।

तत्कालिक काव्य रचना, समस्यापूर्तियां, प्रतिमाला स्पर्धा (अन्त्याक्षर प्रतियोगिता) आदि मनोविनोदात्मक कार्यों में सन्ध्या का समय बिताया जाता था। उक्त स्थानों पर समय-समय पर विविध कलाभिज्ञ, चतुर, विदूषी, वेश्याओं को भी आमन्त्रित किया जाता था ऐसे प्रसंगों पर काव्य रचना और कला प्रवीणता प्रदर्शित करने के लिए परस्पर प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हो जाती थी ऋतु वर्णन के समान विषय ऐसे समय ही सूझते हैं जिस समय ऋतुसंहार रचा गया होगा उस समय कालिदासको किसी राजा का बाश्रय नहीं मिला होगा। क्योंकि काव्य में इस प्रकार का संकेत उपलब्ध नहीं है। कुछ श्लोक एक ही कल्पना को लेकर दुहराये गये हैं तो कुछ श्लोक अपनी प्रिया को लक्ष्य करके लिखे गये है। कई श्लोकों में स्त्रियों के सहवास में तुम्हारा ग्रीष्मकाल सुखदायी हो ऐसा भाव पुरुषों को संबोधित करके प्रकट किया गया है। इन सब बातों से पता चलता है कि कालिदास ने यह खण्डकाव्य नागरिक समाज में बनाया होगा।

मेघदूतम्द

एक सौ बीस श्लोकों के इस खण्डकाव्य में कवि ने अपना उत्कृष्ट रचना कौशल दिखलाया है। इसमें कवि की सौन्दर्यान्वेषणी दृष्टि और कला मर्मज्ञता स्पष्ट रूप से सिद्ध होती है। कुशल चित्रकार जिस प्रकार तूलिका की सहायता से चार छ रेखाओं में सुन्दर चित्र बना देता है उसी तरह कवि ने बहुत ही अल्प शब्दों में मृदुल और अत्यन्त रमणीय उदार भावों का चित्र उतारने में कमाल किया है। इस खण्डकाव्य में कई एक ऐसे स्थल हैं जिन पर कुशल चित्रकार भावपूर्ण चित्र तैयार कर सकता है। इस काव्य की शब्द रचना का संगठन चमकते हुए हीरों की तरह निर्दोष तथा उज्जवल है। इसमें अर्थरूपी रत्नों को, उपमा, उत्प्रेक्षा और अर्थान्तरन्यास आदि सुन्दर आलंकारों में जड़ देने ने उसकी आमा और भी द्विगुणित हो गई है। यदि कालिदास ने केवल मेघदूत की ही रचना की होती तो भी वह संसार के महाकवियों की श्रेणी में उच्च स्थान प्राप्त कर सकते थे। यह काव्य अत्यन्त सरस तथा अत्युत्कृष्ट है। इसका कथानक निम्नलिखित है-

पूर्वमेघ -

अलकाधिपति कुवेर के एक सेवक यक्ष ने प्रभारवश कुछ अपराध कर दिया कुबेर ने उसे एक वर्ष के देश निर्वासन का दण्ड दिया शाप से प्रताड़ित यक्ष अलकानगरी छोड़कर जनकात्मजा के सना से पवित्र जल वाले रामगिरि नामक पर्वत पर जाकर रहने लगा। आठ महीने व्यतीत होने पर आषाढ़ का प्रथम दिन आया। आकाश में बादल घिर आये. इस समय वर्षा ऋतु के आरम्भ में मेघदर्शन से यक्ष का पत्नी वियोग दुःख भड़क उठा। मेरी पत्नी की भी मेरे विरह में यही दशा हुई होगी. ऐसा सोचकर विरही यक्ष ने मेघ को दूत बनाकर अपनी कुशल वार्ता प्रियतमा के पास भेजने का निश्चय किया। धुआं, आग, पानी, हवा आदि तत्वों से बना हुआ अचेतन मेघ मेरा सन्देश किस प्रकार ले जा सकेगा यह संशय कामार्त यक्ष के मन में नहीं आया उसने उसी पर्वत पर नवविकसित कुटज पुष्पों से मेघ की पूजा तथा स्तुति की और उसे अलकानगरी को जाने का मार्ग बताया माल क्षेत्र आम्रकूट पर्वत, विन्ध्याचल की प्रचण्ड चट्टानों में बिखरी हुई नर्मदा का वर्णन करके यक्ष ने मेघ को दशार्ण देश की राजधानी विदिशा का मार्ग बताया।

नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्रान्तिहेतो-

स्त्वत्सम्पकात्पुनकितमिव प्रीपुष्पैः कदम्बै ।

यः पण्यस्त्री रति परिमलीद्गारिभिर्नागराणा

मुद्दामानि प्रथयति शिलावेश्ममियौवनानि

विदिशा के निकट ही नीचे पर्वत है। मेघ ! वहां थोड़ी देर ठहर कर विश्राम कर लेना। उस पर कदम्ब के बड़े-बड़े फूल खिले देख तुझे ऐसा मालूम होगा, जैसे तुझसे भेंट होने के कारण यह पर्वत पुलकित हो उठा है नीचैर्गिरि पर सुन्दरशिलागृह है जिनमें वेश्याओं के अंगराग की सुगन्ध फैलती है जिससे विदिशावासीनागरिकों का उग्र यौवन प्रकट होता है।

पादन्यासक्वणितरशनास्तत्र लीलावर्त-

रत्नच्छायाखचित चलिभिश्चामदैः क्लान्तहस्ताः ।

वेश्यास्त्वत्तो नखपदसुखान् प्राप्य वर्षाग्रबिन्दु-

नामोहयन्ते त्वयि मधुकर श्रेणिदीर्घान् कटाक्षान्।।

उस उज्जैन में महाकालेश्वर के मन्दिर में नृत्य करते समय जिनकी करपनी बज रही है। वे हाथों में रत्नजटित दण्डयुक्त चंवरों को हिलाने से थकी हुई वेश्यायें तेरे वर्षा के प्रथम जल की बूंदों से नखों के घावों में सुख पाकर तुझ पर लम्बे कटाक्ष पात करेंगी।

इसके उपरान्त मार्ग में मिलने वाली गंभीरा नदी देवगिरि नामक पर्वत पर स्थिति कार्तिकेय का मन्दिर धर्मध्यती (चंबल नदी दशपुर (आधुनिक मंदसोर) ब्रहमावर्त देश, कुरुक्षेत्र, सरस्वती और गंगा आदि नदियां तथा अन्त में हिमालय में बसी हुई अलकानगरी का बहुत थोड़े में कल्पनावैचित्र्य के बाहुल्य से किया गया है। मिलने वाले पर्वत देश, नगर ग्राम वन उपवन,होने से यह भाग अत्यन्त चिन्ताकर्षक हुआ है।किन्तु अत्यन्त रमणीयता के साथ रामगिरि से लेकर अलकानगरी तक नदी आदि का वर्णन अत्यन्त रमणीय

उत्तरमेघ-

उत्तरार्द्ध में कवि ने अलकानगरी का तथा या गृह का उल्लेख करते समय अपनी प्रतिमा द्वारा एक नूतन सृष्टि की रचना कर कल्पना शक्ति को स्वच्छन्द विहार करने की अवसर दिया है आरम्भ में यक्ष अलकानगरी का वर्णन करके कहता है, हे मेघ ! अलकानगरी के भवन गगनचुम्बी हैं वे सुन्दर चित्रों से सुसज्जित है। वहां मृदंग बजा करते हैं और वे रत्नखचित हैं वहां के निवासी सदैव तरुण रहते हैं और यौवन का स्वच्छन्द आनन्त लूटते हैं। वहां वृक्ष और लतायें पुष्प, फल के भार से नम्र, मयूर आनन्दित तथा चन्द्रमा के प्रकाश से युक्त रात्रियां होती हैं वहां महलों के स्फटिक मणियुक्त पृष्ठ भाग पर बैठकर तेरी गम्भीर ध्वनि के समान ही निकलती हुई मृदंग ध्वनि को सुनते हुए यक्ष जन अपनी प्रेयसियों के साथ मदिरा का पान करतेहैं वहां चित्र-विचित्र वढियां वस्त्र, अलंकार के लिए पुष्प, पल्लव, पैरों में लगाने के लिए लाक्षाराग इत्यादि स्त्रियों के श्रृंगार की सारी सामग्री कल्प वृक्षों से मिलती है। अलका में भगवान् शंकर निवास करते हैं इसलिए मदन अपने धनुण्य और वाण का उपयोग कर नहीं पाता। तथापि चतुर सुंदरियां मदन का यह कार्य अपने अमोघ कटाक्षों द्वारा पूरा करती हैं। इसी रम्य नगरी में यक्षराज कुबेर के प्रासाद की उत्तर तरफ मेरा घर है जिसमें इन्द्रधनुष के समान

सुन्दर वन्दनवार लगे हुए हैं जिनके कारण मेरा घर तुम्हें दूर से ही दिखाई पड़ेगा। मेरे उस घर के उद्यान में मेरी प्रियतमा का लगाया हुआ सहज ही में हस्तगत होने वाला पुष्पमार से नम्र एक मन्दार का वृक्ष है उसी के निकट एक सुन्दर बावली है जिसकी सीढ़ियां मरकतमणि की है और उसमें हमेशा सुवर्ण कमल खिले रहते हैं। इस वाणी के फूल पर नीलमणि तथा सुवर्णकदली कुंजवेष्टित क्रीड़ा पर्वत है। वहीं माधवी मण्डप के समीप तुझे अशोक और बकुल वृक्ष दीख पड़ेंगे। इन वृक्षों के बीच में रत्नखचित एक सुवर्णस्तम्म पर स्फटिक शिला है उस पर प्रतिदिन सायंकाल को मेरी प्रिया कंकणनाद मधुर करतल शन्द से मयूर को नृत्यकला की शिक्षा देती है। इन सब चिह्नों पर ध्यान रखते हुए मेरे घर का पता तू लगाना उस क्रीड़ा पर्वत पर बैठकर यदि तू अपनी विद्युत दृष्टि से मेरे घर का अन्तर्भाग देख लेगा तो तुझे यही दिखाई देगा –

आलोके ते निपततिपुरा सा बलिव्याकुला वा

मत्सादृश्यं विरहतनुवा भावगम्यं लिखन्ती ।

पृच्छत्ती वा मधुरवचनां सारिकां पञ्जरस्थां

कच्चिद्भर्तुः स्मरसि रसिके त्वं हि तस्य प्रियेति ।।

रघुवंश महाकाव्यम्

यह काम कालिदास के कार्यों में कृष्ट माना जाता है। इसमें कवि कीपरि प्रतिमा काहै।इसकेमिलते हैं। इन सनी में कुल 29 राजाओं का वर्णन है। इसकाओं में पु नामक राजा बहुत कड़ा प्रतापी तनहुआ था उसके धर राजाओं का इस किया गया है।मेंप्रारंभी कीसम्यग ज्ञान होने के लिए उसके ही समानहैऔर कापर संबद्ध पार्वती परमेश्वर की वन्दना करतं कवि ने बहुत नतापूर्वक अपने विषय का महल और उसके सामनेअपनाकिया है कीफल तोड़ने के लिए किसी बने मनुष्य का ऊपर कोहै उसी प्रकार मुझ मन्दमति कामैंहूँ तो यद्धि परहैउपहासास्पद होताप्रारूप प्रयास भी उपहास के जायक है।होनेमणि में पहले से ही शिव कर दियागया हो उसमें गाने में कुछ भी कठिनाईनहीं होती उसी प्रकार पूर्व कवि वर्णित इसहुकुलोत्पन्न राजाओं की महताक्षेपगाकरने सेअपने काव्य की सुवर्ण की क्या परीक्षा करने का अनुरोध किया है।

पहले वर्ग में मनु रोध में उत्पन्न दितीय राजा का चरित्र वर्णित है। यह दिलीप को प्रतापी धर्मात्मा और समस्त शायनीय गुणों से सम्पन्न थे। उनका राज्य आसमुद्र पृथ्वी तक फैला हुआ था उसे दुःख तो पुत्र न होने का था आर अपने राज्य का बार सुर्यास पर छोड़कर की उदारचरिता राजमहिषी सुलक्षणा को लेकर दिलीप कुलगुरु वशिष्ठ के आश्रम में पहुंचे। राजा ने होने का दुःख तिष्ठ जी से निवेदन कियासन्तान न होने का कारण बताउन एक बार तुम स्वर्ग में शव से बेटकर वहां से पृथ्वीलोक थे तब के ही हुई कामधेनु कीपरिक्रमा न करके तुमने उसका अपमान किया।

अभिशाप दिया कि मेरी पुत्री नन्दिनी की सेवा की पुत्रीतुम उसकी सेवा करो याइस कुपित होकर उसने तुमको यहकिए बिना पुत्रलाभ न होगा। उस है। अमेवरिष्ठ जी के आदेशानुसार राजा दिलीपने कामो की कन्या दिनी गाय की सेवा किया -1) दूसरे दिन से ही राजा से अपने अनुचरों की विदाकरनेकाकर दिया और स्वयं दत्तचित्त होकर उसकी सेवा में लग गया। इस प्रकार तीन सप्ताह बीत गये। एक दिन नन्दिनी के मन में आया कि राजा के सत्य की परीक्षा लेनी चाहिये। वह चरती हुई हिमालय की गुफा में घुस गयी। राजा हिमालय की प्राकृतिक शोभा देखने में अपने को भूल गया। इतने में एक सिंह उस गाय पर टूट पड़ा। गाय रक्षा के लिए चीख पड़ी। यह देखकर दिलीप उसकी रक्षा के लिए कटिबद्ध हो गया। ज्यों ही क्रुद्ध होकर उसने सिंह को मारने के लिए

तरकस से बाण निकालना चाहा उसका हाथ अकड़कर वहीं चिपक गया। यह देखकर सिंह राजा से मनुष्य की वाणी में बोला- राजन् मेरा नाम कुम्मोदर है मैं निकुम्भ का मित्र और शंकर जी का सेवक हूं। सामने इस देवदास के वृक्ष को देखते हो ना। इसे पार्वती ने अपने हाथ से सींचकर पाला पोसा है। एक दिन एक जंगली हाथी ने अपने गण्डस्थल को खुजलाकर इस देवदास की त्वचा को छील डाला। इससे पार्वती को परम दुःख हुआ। अतः श्री शंकर जी ने मुझे सिंह का रूप देकर यह आज्ञा दी है कि इस गुहा के पास आने वाले प्राणियों को मारकर तू अपनी जीविका चला। मैंने कल उपवास किया था और यह गाय पारणा रूप में मुझे आज प्राप्त हुई है। अब तेरा कोई वश चलने का नहीं तू लौट जा राजा ने उत्तर दिया- भगवान् शंकर जी स्थावर और जंगम सृष्टि के उत्पादक, पोषक तथा संहारक है अतः उनकी आज्ञा मुझे परम मान्य है किन्तु अपने गुरु के गोधन का सामने नष्ट होने देना भी उचित नहीं हैं, इसलिए मैं तुझे स्वदेह अर्पण करता हूं। इसे तू स्वीकार कर और गाय को तू छोड़ दें। एक गाय के लिए संसार का साम्राज्य, तथा अपने तारुण्यपूर्ण सुन्दर शरीर का त्याग करना मूर्खता का चिन्ह है इत्यादि कहकर सिंह ने राजा को अपने निश्चय से डिगाने का प्रयत्न किया किन्तु राजा ने एक न सुनी। इससे सिंह को राजा का कहना मानना पड़ा। राजा का हाथ खुल गया और वह सिंह के सामने गर्दन झुकाकर बैठ गया। "मेरे ऊपर सिंह झपटने वाला ही है ऐसा सोच ही रहा था कि आकाशसे राजा के ऊपर पुष्प दृष्टि होने लगी। उस सिंह को नंदिनी ने राजा की परीक्षा के लिए माया से उत्पन्न किया था राजा की इस प्रगाढ़ गुरुभक्ति से नन्दिनी सन्तुष्ट हुई और पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद देती हुए राजा से अपना दूध पीने के लिए बोली। आश्रम को लौटकर राजा ने यह सब वृतान्त गुरु वशिष्ठ और रानी सुरक्षिणा को सुनाया हवन और बछड़े के पीने से बचे हुए दूध को राजा और रानी ने गुरु कीआज्ञा से पिया दूसरे दिन व्रत का उद्यापन करके वे दोनों राजधानी को लौट आये।

रानी शीघ्र ही गर्भवती हुई और यथासमय जब पांचों ग्रह उच्च स्थान में थे ऐसे शुभ मुहूर्त में उसको पुत्र उत्पन्न हुआ। राजा ने उसका नाम रघु रखा। सकल शास्त्र विद्या और शस्त्र विद्या में प्रवीण देखकर राजा ने उसे युवराज बनाया और अश्वमेघ याग आरम्भ किया। इस प्रकार निन्यानवे अश्वमेघ यज्ञ निर्विघ्नता पूर्वक समाप्त हुए। सौवें अश्वमेघ के समय इन्द्र अदृश्य रूप से आकर अश्व को चुरा ले गया किन्तु नन्दिनी की कृपा से रघु को इन्द्र का यह कपट मालूम हो गया। उसने इन्द्र को लड़ने के लिए आहवान किया। दोनों का भयंकर युद्ध हुआ रघु की वीरता से सन्तुष्ट होकर इन्द्र ने कहा- अश्व को छोड़कर तू दूसरा वर मांग तब रघु ने यह इच्छा प्रकट की कि अश्व के बिना भी नियमपूर्वक समाप्त किसे गये यज्ञ का पुण्य मेरे पिता को मिले इन्द्र द्वारा इस बात को स्वीकार कर लेने पर रघु पिता के पास लौट आया। यज्ञ के समाप्त होने पर राजा दिलीप ने रघु को राजगद्दी पर बैठाया और स्वयं सुरक्षिणा के साथ तपोवन को चला गया (सर्ग-3) रघु ने ऐसा सुन्दर राज्य शासन किया कि लोग दिलीप को भूल गये। प्रजारंजन करने के कारण रघु की 'राजा यह पदवी अन्वर्य हुई। शरद ऋतु के आने पर पड़नि सेना साथ लेकर वह दिग्विजय के लिए निकला। पहले उसने पूर्व दिशा में सुहम, वंग, इत्यादि देश जीतकर गंगा के प्रवाह में अपना विजय स्तम्भ गाड़ा फिर वह दक्षिण की ओर चला। कलिंग देश के राजा का पराजय कर उसे कर लेकर छोड़ दिया किन्तु उसके राज्य को आत्मसात् नहीं किया। बाद में पूर्व किनारे से चलकर उसने कावेरी नदी पार की ओर पाण्ड्य राजा को पराजित किया तथा उससे ताम्रपर्णी नदी के मुहाने पर मिलने वाले मोतियों का कर लिया। दक्षिण दिशा में मलय और दर्दुर पर्वत पर चढ़ाई की और सहयपर्वत लांघकर केरल तथा अपरान्त (कांकण) देश केराजाओं को हराया।

वहां के घोरफिर पारसीक देश को जीतने के लिए वह स्थल मार्ग से आगे युद्ध में उसने अपने बाणों से यवनों की लंबी दाढ़ी वाले सिर काट-काट कर जमीन पाट दी। उत्तर दिशा के दिग्विजय में हूण, काम्बोज इत्यादि राजाओं का पराभव कर और उनसे कर भार लेकर वह हिमालय की ओर चला वहां उत्सव संकेतादि गणराज्यों से युद्ध होने पर उन्होंने राजा रघु के स्वामित्व को स्वीकार किया और भेंट दी। फिर कामरूप (आसाम) के राजा ने रत्नरूपी दुष्पों से उसका सत्कार किया।

निष्कर्ष

तत्कालिक काव्य रचना, समस्यापूर्तियां, प्रतिमाला स्पर्धा (अन्त्याक्षर प्रतियोगिता) आदि मनोविनोदात्मक कार्यों में सन्ध्या का समय बिताया जाता था। उक्त स्थानों पर समय-समय पर विविध कलाभिज्ञ, चतुर, विदूषी, वेश्याओं को भी आमन्त्रित किया जाता था ऐसे प्रसंगों पर काव्य रचना और कला प्रवीणता प्रदर्शित करने के लिए परस्पर प्रतिस्पर्धा प्रारम्भ हो जाती थी ऋतु वर्णन के समान विषय ऐसे समय ही सूझते हैं जिस समय ऋतुसंहार रचा गया होगा उस समय कालिदासको किसी राजा का बाश्रय नहीं मिला होगा। क्योंकि काव्य में इस प्रकार का संकेत उपलब्ध नहीं है। कुछ श्लोक एक ही कल्पना को लेकर दुहराये गये हैं तो कुछ श्लोक अपनी प्रिया को लक्ष्य करके लिखे गये है। कई श्लोकों में स्त्रियों के सहवास में तुम्हारा ग्रीष्मकाल सुखदायी हो ऐसा भाव पुरुषों को संबोधित करके प्रकट किया गया है। इन सब बातों से पता चलता है कि कालिदास ने यह खण्डकाव्य नागरिक समाज में बनाया होगा।

संदर्भ

1. राम गोपाल, 2014-07-1 गूगल पुस्तक (अभिगमन तिथि १५.०७.२०१४)।
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी, राष्ट्रीय कवि कालिदास हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रन्थावली, गूगल पुस्तक (अभिगमन तिथि १५.०७.२०१४)।
3. रामजी उपाध्याय, महाकवि कालिदास की कृतियांऋतुसंहार:-ऋतुसंहार कालिदास की प्रथम काव्य कृति है। इतिहासकारों के अनुसार बाल कवि कालिदास ने काव्य कला का आरंभ ऋतुवर्णनपरक इसी लघु काव्य से किया था।-#अश्वनी पान्डेय: संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास गूगल पुस्तक (अभिगमन तिथि १५.०७.२०१४)।
4. आचार्य दण्डी ने लिखा है कि कालिदास वैदर्भी रीति के सर्वोच्च प्रतिष्ठाता हैं --
5. "उपमा कालिदासस्य, भारवेरर्थगौरवम्..."
6. "निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिसु। प्रीतिर्मधुर सान्द्रासु...।।" -- बाणभट्ट, हर्षचरितम्।
7. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', संस्कृत साहित्य का इतिहास, चौखम्भा भारती अकादमी, पृष्ठ 202
8. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', संस्कृत साहित्य का इतिहास, चौखम्भा भारती अकादमी, पृष्ठ 202
9. संस्कृत साहित्य सोपान 2014-07- गूगल पुस्तक, (अभिगमन तिथि 16.07.2014)
10. अच्युतानंद घिल्डियाल और गोदावरी घिल्डियाल - कालिदास और उसका मानवीय साहित्य 2014-07- गूगल पुस्तक, (अभिगमन तिथि 16.07.2014)
11. अच्युतानंद घिल्डियाल और गोदावरी घिल्डियाल - कालिदास और उसका मानवीय साहित्य 2014-07- पुस्तक, (अभिगमन तिथि 16.07.2014)
12. उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', संस्कृत साहित्य का इतिहास, चौखम्भा भारती अकादमी, पृष्ठ १९९
13. ए बी कीथ, संस्कृत साहित्य का इतिहास, चौखम्भा भारती अकादमी, पृष्ठ
14. "चित्तं व्याप्नोति यः क्षिप्रं शुष्केन्धनमिवानलः। स प्रसादः स्मस्तेषु रसेसु रचानासु वा।।"
15. "उपमा कालिदासस्य...।"